१४. गुणत्रयविभागयोग

श्रीभगवान बोले— समस्त ज्ञानों में उत्तम उस परम ज्ञान को मैं फिर से कहूंगा, जिसे जानकर सब साधकों ने इस संसार से मुक्त होकर परम सिद्धि प्राप्त की है. (१४.०१)

इस ज्ञान का आश्रय लेकर मेरे स्वरूप को प्राप्त मनुष्य सृष्टि के आदि में पुनर्जन्म नहीं लेते तथा प्रलयकाल में भी व्यथित नहीं होते हैं. (१४.०२)

हे अर्जुन, मेरी महद् ब्रह्मरूप प्रकृति सभी प्राणियों की योनि है, जिसमें मैं चेतनारूप बीज डालकर (जड़ और चेतन के संयोग से) समस्त भूतों की उत्पत्ति करता हूं. (९.१० भी देखें) (१४.०३)

हे कुन्तीपुत्र, सभी योनियों में जितने शरीर पैदा होते हैं, प्रकृति उन सबकी माता है और मैं चेतना देने वाला पिता हूं. (१४.०४)

हे अर्जुन, प्रकृति से उत्पन्न तीनों गुणरूपी रस्सी — सत्त्व, रजस और तमस — अविनाशी जीव को देह के साथ बांध देते हैं. (१४.०५)

हे पापरहित अर्जुन, इनमें सतोगुण निर्मल होने के कारण विकाररहित और ज्ञान देने वाला है, यह जीव को सुख और ज्ञान की आसक्ति से बांधता है. (१४.०६)

हे अर्जुन, रजोगुण को रागस्वरूप समझो, जिससे विषय-भोग की प्यास (तृष्णा) और आसक्ति उत्पन्न होती है. यह जीवात्मा को कर्मफल की आसक्ति से बांधता है. (१४.०७)

और हे भारत, सब जीवों को भ्रम में डालने वाले तमोगुण को अज्ञान से उत्पन्न जानो. तमोगुण लापरवाही, आलस और निद्रा के द्वारा जीव को बांधता है. (१४.०८)

हे अर्जुन, सतोगुण सुख में और रजोगुण कर्म में आसक्त करवाता है तथा तमोगुण ज्ञान को ढककर जीव को लापरवाह बना देता है. (१४.०९)

हे अर्जुन, कभी रजोगुण और तमोगुण को दबाकर सतोगुण, कभी सतोगुण और तमोगुण को दबाकर रजोगुण तथा कभी सतोगुण और रजोगुण को दबाकर तमोगुण बढ़ता है. (१४.१०)

जब ज्ञान का प्रकाश इस देह के सभी द्वारों (अर्थात् समस्त इन्द्रियों) को प्रकाशित करता है (अर्थात् जब जीवात्मा के अन्तःकरण में ज्ञान के प्रकाश का उदय होता है), तब सतोगुण को बढ़ा हुआ जानना चाहिए. (१४.११)

हे भरतश्रेष्ठ, रजोगुण के बढ़नेपर लोभ, सक्रियता, सकाम कर्म, बेचैनी, लालसा आदि उत्पन्न होते हैं. (१४.१२)

हे कुरुनन्दन, तमोगुण के बढ़नेपर अज्ञान, निष्क्रियता, लापरवाही, भ्रम आदि उत्पन्न होते हैं. (१४.१३)

जिस समय सतोगुण बढ़ा हो, उस समय यदि मनुष्य मरता है, तब जीव उत्तम कर्म करने वालों के निर्मल लोक अर्थात् स्वर्ग को जाता है. (१४.१४)

जिस समय रजोगुण बढ़ा हो, उस समय यदि मनुष्य मरता है, तब वह कर्मों में आसक्ति वाले मनुष्यों में जन्म लेता है. तमोगुण की वृद्धि के समय मरने वाला मनुष्य पशु आदि मूढ़योनियों में जन्म लेता है. (१४.१५)

सात्त्विक कर्म का फल शुभ और निर्मल कहा गया है, राजसिक कर्म का फल दुःख और तामसिक कर्म का फल अज्ञान कहा गया है. (१४.१६)

सतोगुण से ज्ञान, रजोगुण से लोभ तथा तमोगुण से लापरवाही, भ्रम और अज्ञान उत्पन्न होते हैं. (१४.१७)

सत्त्वगुण में स्थित व्यक्ति उत्तम लोकों को जाते हैं, राजस व्यक्ति मनुष्ययोनि में आते हैं और तमोगुण की हीन प्रवृत्तियों में स्थित तामस मनुष्य नीचयोनियों में जन्म लेते हैं. (१४.१८)

जब विवेकी मनुष्य तीनों गुणों के अतिरिक्त किसी अन्य को कर्ता नहीं समझता है तथा गुणों से परे मुझ परमात्मा को तत्त्व से जान लेता है, उस समय वह मेरे स्वरूप अर्थात् सारूप्य मुक्ति को प्राप्त करता है. (३.२७, ५.०९, १३.२९ भी देखें) (१४.१९)

जब मनुष्य देह की उत्पत्ति के कारण तथा देह से उत्पन्न तीनों गुणों से परे हो जाता है, तब वह मुक्ति प्राप्तकर जन्म, वृद्धावस्था और मृत्यु, के दुःखों से विमुक्त हो जाता है. (१४.२०)

अर्जुन बोले— हे प्रभो, इन तीनों गुणों से अतीत मनुष्य के क्या लक्षण हैं? उसका आचरण कैसा होता है? और मनुष्य इन तीनों गुणों से परे कैसे हो सकता है ? (१४.२१)

श्रीभगवान बोले— हे अर्जुन, जो मनुष्य तीनों गुणों के कार्य — ज्ञान, सक्रियता और भ्रम — में बन्ध जाने पर बुरा नहीं मानता और उनसे मुक्त होने पर उनकी आकांक्षा भी नहीं करता है, जो साक्षी के समान रहकर गुणों के द्वारा विचलित नहीं होता तथा "गुण ही अपने-अपने कार्य कर रहे हैं" ऐसा समझकर परमात्मा में स्थिर भाव से स्थित रहता है; (१४.२२-२३)

जो निरन्तर आत्मभाव में रहता है तथा सुख-दुःख में समान रहता है; जिसके लिए मिट्टी, पत्थर और सोना बराबर है, जो धीर है, जो प्रिय-अप्रिय, निन्दा-स्तुति, मान-अपमान तथा शत्रु-मित्र में समान भाव रखता है और जो सम्पूर्ण कर्मों में कर्तापन के भाव से रहित है — वह गुणातीत कहा जाता है. (१४.२४-२५)

जो मनुष्य अनन्य भक्ति से निरन्तर मेरी उपासना करता है, वह प्रकृति के तीनों गुणों को पार करके परब्रह्म परमात्मा की प्राप्ति के योग्य हो जाता है. (७.१४, १५.१९ भी देखें) (१४.२६)

क्योंकि मैं (परब्रह्म) ही अविनाशी अक्षरब्रह्म, शाश्वत धर्म तथा परम आनन्द का स्रोत हूं. (१४.२७)

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे
श्रीकृष्णार्जुनसंवादे गुणत्रयविभागयोगो नाम चतुर्दशोऽध्यायः ॥